eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

भारत में शैक्षिक नीति का विकासः स्वतंत्रता (1947) से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तक एक ऐतिहासिक विश्लेषण

डॉ0 पुनीत कुमार शुक्ला[1]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, जे0 पी0 एस0 पी0 एम0 नालंदा, बिहार उ0प्र0

Received: 21 April 2026 Accepted & Reviewed: 25 April 2026, Published: 30 April 2026

Abstract

भारत में शैक्षिक नीति का प्रक्षेपवक्र औपनिवेशिक विरासत से एक आत्मनिर्भर, समावेशी और आधुनिक ढांचे की ओर एक जटिल यात्रा का प्रतिनिधित्व करता है। 1947 में स्वतंत्रता के समय, भारत को एक ऐसी जर्जर शिक्षा व्यवस्था विरासत में मिली थी, जिसे केवल ब्रिटिश प्रशासन की सेवा के लिए बनाया गया था। साक्षरता दर मात्र 12 प्रतिशत थी और उच्च शिक्षा केवल अभिजात वर्ग तक सीमित थी। इस ऐतिहासिक विश्लेषण का उद्देश्य यह समझना है कि कैसे विभिन्न विद्वानों और नीतियों ने भारतीय शैक्षिक परिवेश को बदला है। प्रारंभिक दौर में राधाकृष्णन और मुदालियर आयोगों ने विश्वविद्यालय और माध्यमिक शिक्षा की शैक्षणिक नींव रखी। 1968 की पहली नीति ने राष्ट्रीय एकता पर जोर दिया, जबकि 1986 की नीति ने आधुनिकीकरण और पहुँच को प्राथमिकता दी। 21वीं सदी में, सर्व शिक्षा अभियान और शिक्षा का अधिकार अधिनियम ने नामांकन को सार्वभौमिक बनाया। वर्तमान में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक बहु–विषयक और लचीले ढांचे के माध्यम से रटने वाली शिक्षा का अंत करने का प्रयास कर रही है। यह यात्रा दर्शाती है कि भारतीय शिक्षा अब संख्यात्मक विस्तार से हटकर गुणात्मक उत्कृष्टता की ओर बढ़ चुकी है। शिक्षा अब केवल साक्षरता का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और आर्थिक सशक्तिकरण का एक अनिवार्य उपकरण बन गई है। यह शोध पत्र विभिन्न आयोगों के दार्शनिक आधारों और उनके द्वारा समाज पर डाले गए दीर्घकालिक प्रभावों की विवेचना करता है। अंततः, यह विश्लेषण इस तथ्य की पुष्टि करता है कि भारत की वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनने की आकांक्षा उसके निरंतर विकसित होते शैक्षिक ढांचे और नीतिगत सुधारों में निहित है।

मुख्य शब्द– शैक्षिक नीति, राधाकृष्णन आयोग, कोठारी आयोग, सर्व शिक्षा अभियान, RTE अधिनियम, NEP 2020, ऐतिहासिक विश्लेषण, सामाजिक न्याय, बहु–विषयक शिक्षा, समावेशिता।

Introduction

स्वतंत्रता के उपरांत भारत ने शिक्षा को राष्ट्र निर्माण के सबसे शक्तिशाली उपकरण के रूप में स्वीकार किया। औपनिवेशिक शासन के अंत के साथ ही भारत के सामने एक ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करने की चुनौती थी जो न केवल तकनीकी रूप से सक्षम हो बल्कि भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को भी पुनर्जीवित कर सके। प्रारंभिक वर्षों में, डॉ. राधाकृष्णन और डॉ. मुदालियर जैसे प्रबुद्ध शिक्षाविदों के नेतृत्व में गठित आयोगों ने विश्वविद्यालय और माध्यमिक शिक्षा की नई रूपरेखा तैयार की, जिसने उच्च शिक्षा के मानकों को विनियमित करने की दिशा में कार्य किया। 1960 के दशक के मध्य में कोठारी आयोग ने शिक्षा को राष्ट्रीय विकास के इंजन के रूप में प्रस्तुत किया, जिससे 1968 की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति का जन्म हुआ। इसके बाद, 1986 की नीति ने वैश्विक परिदृश्य के अनुरूप तकनीकी शिक्षा और समान पहुँच पर बल दिया। 21वीं सदी के पहले दशक में, शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 ने शिक्षा को एक मौलिक

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

अधिकार के रूप में स्थापित कर सामाजिक क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया। वर्तमान में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा जगत में एक क्रांतिकारी बदलाव लेकर आई है, जो रटंत प्रणाली को समाप्त कर आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा देती है। यह प्रस्तावना उन नीतिगत मील के पत्थरों को रेखांकित करती है जिन्होंने भारत को एक साक्षर राष्ट्र से एक ज्ञान–आधारित समाज की ओर अग्रसर किया है। शिक्षा की यह विकास यात्रा दर्शाती है कि कैसे नीतियों ने समय–समय पर बदलती वैश्विक चुनौतियों और घरेलू आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य स्थापित किया है।

1– स्वतंत्रता के बाद की साक्षरता और राधाकृष्णन आयोग (1948)– 1947 में स्वतंत्रता के बाद, भारत की प्राथमिक चुनौती एक ऐसी शिक्षा प्रणाली का निर्माण करना था जो लोकतंत्र के मूल्यों को पोषित कर सके। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में गठित आयोग ने स्पष्ट किया कि शिक्षा को केवल सूचना प्रदान करने तक सीमित नहीं रहना चाहिए। आयोग ने स्वीकार किया कि औपनिवेशिक प्रणाली ने भारतीय संस्कृति, इतिहास और क्षेत्रीय भाषाओं की घोर उपेक्षा की थी। उस समय का वातावरण अत्यंत अभाव और व्यापक निरक्षरता का था, जिससे उबरने के लिए आयोग ने अधिक समग्र और मूल्य–आधारित पाठ्यक्रम की सिफारिश की। आयोग ने तर्क दिया कि लोकतंत्र के जीवित रहने के लिए नागरिकों को केवल रोजगार के लिए नहीं, बल्कि स्वतंत्रता और सत्य की उच्च खोज के लिए शिक्षित किया जाना चाहिए। इसने शिक्षा को एक राज्य की जिम्मेदारी के रूप में संस्थागत बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण ब्लूप्रिंट प्रदान किया। इस युग ने एक खंडित और कुलीन औपनिवेशिक स्कूल प्रणाली से एक एकीकृत राष्ट्रीय संरचना की ओर संक्रमण का मार्ग प्रशस्त किया। शिक्षक को एक नैतिक मार्गदर्शक के रूप में स्थापित करके, आयोग ने कक्षा के वातावरण को चरित्र निर्माण और राष्ट्रीय एकीकरण के स्थान के रूप में पुनः परिभाषित किया। इसकी विरासत आज भी विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना और शैक्षणिक स्वायत्तता की दिशा में किए गए प्रयासों में जीवित है। वैज्ञानिक जांच को आध्यात्मिक ज्ञान के साथ एकीकृत करने का विषय आज भी भारतीय नीतिगत चर्चाओं में प्रासंगिक बना हुआ है। आयोग का दृढ़ मत था कि शिक्षा का उद्देश्य मानव मस्तिष्क को केवल तथ्यों से भरना नहीं, बल्कि उसे सत्य के प्रकाश के प्रति जागरूक करना है। इसने उच्च शिक्षा में शोध और छात्रवृत्ति के महत्व को रेखांकित किया, जिससे आने वाले दशकों में भारत के वैज्ञानिक और तकनीकी विकास की आधारशिला रखी गई।

राधाकृष्णन के अनुसार, – शिक्षा केवल जीविकोपार्जन का साधन नहीं है, बल्कि यह आत्मा के जीवन में एक दीक्षा है, सत्य की खोज और सद्गुण के अभ्यास में मानव आत्मा का एक प्रशिक्षण है।[1]

2. मुदालियर आयोग (1952) और माध्यमिक शिक्षा सुधार– डॉ. ए. लक्ष्मणस्वामी मुदालियर के नेतृत्व में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने तत्कालीन शिक्षा को किताबी और परीक्षा–केंद्रित बताया, जो छात्रों को वास्तविक जीवन की चुनौतियों के लिए तैयार नहीं कर पा रही थी। इसके समाधान के रूप में बहुउद्देशीय स्कूलों की सिफारिश की गई, ताकि छात्रों की विशिष्ट क्षमताओं के अनुसार व्यावसायिक और तकनीकी विषयों को मुख्यधारा के पाठ्यक्रम में एकीकृत किया जा सके। यह भारतीय शिक्षा के इतिहास में व्यावसायीकरण का पहला बड़ा औपचारिक प्रयास था। आयोग ने न केवल पाठ्यक्रम, बल्कि स्कूलों के भौतिक वातावरण जैसे पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं और पाठ्येतर गतिविधियों के सुधार पर भी जोर दिया। इसने उच्चतर माध्यमिक चरण की नींव रखी ताकि छात्र विश्वविद्यालय में प्रवेश से पूर्व अधिक परिपक्व हो सकें। यद्यपि वित्तीय बाधाओं और प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी के कारण इसका पूर्ण कार्यान्वयन कठिन रहा, लेकिन इसने श्रम की गरिमा और शिल्प कौशल के प्रति सम्मान पैदा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसने स्कूल को रटने

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

की फैक्ट्री से हटाकर सामाजिक प्रशिक्षण के एक गतिशील केंद्र में बदलने की वकालत की। मुदालियर आयोग द्वारा शुरू किया गया व्यावसायिक विमर्श ही भविष्य की सभी शिक्षा नीतियों का आधार बना। आयोग का मानना था कि माध्यमिक शिक्षा का लक्ष्य केवल कॉलेज के लिए तैयार करना नहीं, बल्कि नागरिकता के लिए प्रशिक्षित करना होना चाहिए। इसने शिक्षकों के प्रशिक्षण और उनकी सेवा शर्तों में सुधार का आह्वान किया, जिससे शिक्षा की गुणवत्ता में व्यापक परिवर्तन की संभावना बनी। इस आयोग ने माध्यमिक स्तर पर शविविध पाठ्यक्रमश की आवश्यकता पर जोर दिया, जिससे छात्र अपनी क्षमतानुसार कला, वाणिज्य, कृषि या विज्ञान का चुनाव कर सकें। मुदालियर के अनुसार , ——————————————————

सभी शैक्षिक सुधारों का शुरुआती बिंदु शिक्षक होना चाहिए, और शिक्षक को समाज में वह स्थान दिया जाना चाहिए जो उसकी जिम्मेदारियों के अनुरूप हो।[2]

3. कोठारी आयोग (1964–66)– 10+2+3 ढांचा– डॉ. दौलत ैपदही कोठारी की अध्यक्षता में गठित आयोग ने शिक्षा को सीधे राष्ट्रीय उत्पादकता और सामाजिक न्याय से जोड़ने की वकालत की। कोठारी आयोग ने 10+2+3 ढांचे का प्रस्ताव दिया, जिसने पूरे देश में शिक्षा की संरचना को एक समान बनाया। आयोग ने समान स्कूल प्रणाली का सपना देखा था, जहाँ अमीर और गरीब का बच्चा एक ही छत के नीचे पढ़े। इसने विज्ञान शिक्षा को अनिवार्य बनाने और माध्यमिक स्तर से ही व्यावसायिक प्रशिक्षण देने पर जोर दिया। आयोग ने तर्क दिया कि शिक्षा और अनुसंधान राष्ट्र की आर्थिक प्रगति के इंजन हैं। इसके अलावा, त्रि–भाषा सूत्र को इसी आयोग ने मजबूती से पेश किया ताकि क्षेत्रीय पहचान और राष्ट्रीय एकता के बीच संतुलन बना रहे। कोठारी आयोग ने यह भी सिफारिश की कि शिक्षा बजट को राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत होना चाहिए, जो आज भी भारतीय शिक्षाविदों के लिए एक बड़ा लक्ष्य बना हुआ है। इस रिपोर्ट ने उच्च शिक्षा में शोध और विकास पर जोर देकर भारत को तकनीकी क्षेत्र में भविष्य की महाशक्ति बनाने की नींव रखी। इसने शिक्षा को केवल व्यक्तिगत उन्नति का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति का उपकरण माना। आयोग ने स्पष्ट किया कि शिक्षा ही एकमात्र ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा सामाजिक और राष्ट्रीय परिवर्तन लाया जा सकता है। इसने प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा देने और शिक्षकों के निरंतर उन्नयन के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर बल दिया। कोठारी आयोग का दर्शन शिक्षा को केवल ज्ञान अर्जन तक सीमित नहीं रखता था, बल्कि उसे राष्ट्र के सांस्कृतिक और आर्थिक पुनर्निर्माण का आधार मानता था। कोठारी के अनुसार , – भारत की नियति अब उसकी कक्षाओं में आकार ले रही है। यह, हमारा मानना है, कोई मात्र बयानबाजी नहीं है।[3]

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968)– आत्मनिर्भरता का निवेश– 1968 की नीति ने कोठारी आयोग के विजन को पहली बार सरकारी नीति का रूप दिया। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री और शिक्षाविद डॉ. वी.के.आर.वी. राव ने इस कालखंड में शिक्षा को आर्थिक विकास के लिए एक निवेश के रूप में देखने पर जोर दिया। उनका मानना था कि शिक्षा केवल डिग्री प्राप्त करने के लिए नहीं, बल्कि मानव संसाधन के विकास और सामाजिक आत्मनिर्भरता के लिए होनी चाहिए। इस नीति ने क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा देने के विचार को मजबूती प्रदान की, जिससे ग्रामीण प्रतिभाओं को मुख्यधारा में आने का मौका मिला। नीति ने 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा के संवैधानिक वादे को दोहराया। इसने शिक्षकों के वेतनमान और कार्य दशाओं में सुधार की वकालत की ताकि समाज के सबसे प्रबुद्ध लोग इस पेशे की ओर आकर्षित हों। 1968 की नीति ने विज्ञान और गणित को स्कूली स्तर पर प्राथमिकता दी, जिसने भविष्य की तकनीकी क्रांति का

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

आधार तैयार किया। डॉ. राव के अनुसार, जब तक शिक्षा उत्पादकता से नहीं जुड़ेगी, तब तक बेरोजगारी की समस्या का समाधान संभव नहीं है। इस नीति ने भारतीय भाषाओं के साहित्य और अनुवाद पर भी विशेष ध्यान दिया ताकि ज्ञान का लोकतंत्रीकरण हो सके। इसने राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए एक सामान्य स्कूल प्रणाली विकसित करने के लक्ष्य को भी सामने रखा। डॉ. राव ने इस बात पर बल दिया कि शिक्षा का प्रसार सामाजिक न्याय का साधन है, जो ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच की गहरी खाई को भरने में सक्षम है। इस नीति ने माध्यमिक स्तर पर खेलकूद और शारीरिक शिक्षा के महत्व को भी स्वीकार किया। राव के अनुसार , – शिक्षा को एक निवेश के रूप में देखा जाना चाहिए जो न केवल आर्थिक लाभ प्रदान करता है, बल्कि मानव संसाधन की गुणवत्ता में सुधार कर राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया को गति देता है।[4]

5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), पहुँच और समानता का युग– 1986 की नीति के वैचारिक आधार को मजबूत करने में प्रसिद्ध शिक्षाविद जे.पी. नायक का महत्वपूर्ण योगदान रहा। नायक का मानना था कि भारत में शिक्षा की पहुँच भौगोलिक और सामाजिक बाधाओं से मुक्त होनी चाहिए। ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड इसी दर्शन का परिणाम था कि हर गाँव के स्कूल में न्यूनतम बुनियादी सुविधाएं होनी चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि जब तक समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े व्यक्ति तक शिक्षा नहीं पहुँचेगी, तब तक लोकतंत्र अधूरा है। इस नीति ने जवाहर नवोदय विद्यालयों की स्थापना की, जो ग्रामीण मेधावियों के लिए उत्कृष्टता के केंद्र बने। इसने महिला शिक्षा और अनुसूचित जाति/जनजाति के सशक्तिकरण को मुख्यधारा में रखा। नायक ने जोर दिया कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा केवल कुलीन वर्ग का विशेषाधिकार नहीं होनी चाहिए। 1986 की नीति ने मुक्त विश्वविद्यालय प्रणाली को बढ़ावा दिया ताकि कामकाजी लोग भी अपनी शिक्षा जारी रख सकें। इसने शिक्षा को करके सीखने के बाल–केंद्रित दृष्टिकोण की ओर मोड़ा और पर्यावरण के प्रति जागरूकता को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया। जे.पी. नायक ने शिक्षा के परिमाण, समानता और गुणवत्ता (Quantity, Equality and Quality) के त्रिकोण को संतुलित करने पर बल दिया। इस नीति ने तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा के उन्नयन के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद को सुदृढ़ किया। इसने शिक्षा के माध्यम से मूल्यों के संवर्धन और धर्मनिरपेक्षता के प्रसार का लक्ष्य रखा। नायक का मानना था कि शिक्षा केवल व्यक्तिगत योग्यता का प्रमाणपत्र नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की एक सचेत प्रक्रिया होनी चाहिए। नायक के अनुसार , – शिक्षा में समानता का अर्थ केवल नामांकन नहीं है, बल्कि प्रत्येक शिक्षार्थी को उसकी पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना सफलता के समान अवसर प्रदान करना है। [5]

6. 1992 की कार्य योजना, विकेंद्रीकरण और जन सहभागिता– 1992 के संशोधनों के समय प्रो. मृणाल मिरी जैसे विचारकों ने शिक्षा के सांस्कृतिक संदर्भ और विकेंद्रीकरण पर जोर दिया। इस काल में यह स्पष्ट किया गया कि जब तक स्थानीय समुदाय और पंचायती राज संस्थान शिक्षा के प्रबंधन में सक्रिय नहीं होंगे, तब तक नीतियां केवल कागजों तक सीमित रहेंगी। विकेंद्रीकरण का अर्थ केवल प्रशासनिक शक्ति का हस्तांतरण नहीं, बल्कि स्थानीय संस्कृति और आवश्यकताओं को पाठ्यक्रम में जगह देना था। 1992 की कार्य योजना ने न्यूनतम शिक्षण स्तर को परिभाषित किया ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि विस्तार के साथ गुणवत्ता का समझौता न हो। इसने जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थानों को सशक्त बनाया ताकि शिक्षक प्रशिक्षण स्थानीय परिवेश के अनुरूप हो। इस नीति ने गैर–औपचारिक शिक्षा के माध्यम से उन बच्चों तक पहुँचने का प्रयास किया जो स्कूल छोड़ चुके थे। इसने प्रौढ़ साक्षरता को एक सामाजिक मिशन

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

के रूप में बढ़ावा दिया। प्रो. मिरी के अनुसार, शिक्षा को व्यक्ति की पहचान और उसकी जड़ों से जोड़ना अनिवार्य है, अन्यथा वह केवल बाहरी आरोपित ज्ञान बनकर रह जाएगी। उन्होंने तर्क दिया कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य व्यक्ति को अपनी परंपराओं और आधुनिकता के बीच एक नैतिक पुल बनाने में मदद करना है। 1992 के POA ने महिलाओं और अल्पसंख्यकों के लिए विशेष शिक्षा केंद्रों की स्थापना पर बल दिया। इसने उच्च शिक्षा के मानकों को बनाए रखने के लिए नैक जैसी संस्थाओं की भूमिका को रेखांकित किया। मिरी के दर्शन ने शिक्षा को केवल कौशल विकास तक सीमित न रखकर उसे मानवीय संवेदनाओं और नैतिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में देखा। मिरी के अनुसार , – शिक्षा का विकेंद्रीकरण केवल प्रशासनिक सुविधा नहीं है, बल्कि यह विविध सांस्कृतिक संदर्भों को शैक्षिक प्रक्रिया में एकीकृत करने का एक अनिवार्य माध्यम है।[6]

7. सर्व शिक्षा अभियान, क्षमता विकास का दर्शन– सर्व शिक्षा अभियान के पीछे के वैचारिक दर्शन में नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. अमर्त्य सेन का प्रभाव स्पष्ट दिखता है। सेन ने तर्क दिया कि बुनियादी शिक्षा और स्वास्थ्य की कमी भारत के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधा है। SSA ने नामांकन की भौतिक बाधाओं को दूर करने के लिए **स्कूल चलें हम** जैसे अभियानों को जन–जन तक पहुँचाया। इसने शिक्षा को ष्क्षमता विकासष् के एक उपकरण के रूप में स्थापित किया। SSA के तहत लाखों नए शिक्षकों की भर्ती की गई और मध्याह्न भोजन योजना के माध्यम से कुपोषण और ड्रॉप–आउट रेट को कम करने का प्रयास किया गया। सेन का मानना था कि साक्षरता केवल पढ़ने–लिखने की योग्यता नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति को अपनी स्वतंत्रता का प्रयोग करने के योग्य बनाती है। इस अभियान ने लड़कियों और पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के नामांकन में ऐतिहासिक वृद्धि की। इसने शिक्षा के बुनियादी ढांचे जैसे बिजली, शौचालय और पेयजल को स्कूल का अनिवार्य हिस्सा बनाया। यह दुनिया का सबसे बड़ा प्राथमिक शिक्षा विस्तार कार्यक्रम बना, जिसने शिक्षा को एक वैश्विक मानव अधिकार के रूप में प्रतिष्ठित किया। डॉ. सेन ने इस बात पर जोर दिया कि शिक्षा के बिना व्यक्ति उन अवसरों का लाभ नहीं उठा सकता जो आर्थिक सुधार प्रदान करते हैं। SSA ने समावेशी शिक्षा की वकालत की, जिससे विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को भी मुख्यधारा के स्कूलों में स्थान मिला। इस अभियान ने स्थानीय शिक्षा समितियों को मजबूत किया, जिससे स्कूलों के प्रबंधन में पारदर्शिता और जवाबदेही आई। सेन का क्षमता–आधारित दृष्टिकोण यह सुनिश्चित करता था कि शिक्षा केवल रटने की प्रक्रिया न होकर बच्चे के भविष्य की स्वायत्तता का आधार बने। सेन के अनुसार , –

बुनियादी शिक्षा तक पहुँच की कमी न केवल एक व्यक्तिगत अभाव है, बल्कि यह एक राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक क्षमताओं के विस्तार में एक गंभीर अवरोध है।[7]

8. शिक्षा का अधिकार, अधिनियम 2009, कानूनी गरिमा, RTE के निर्माण और इसके कानूनी विमर्श में डॉ. कपिल सिब्बल ने एक विद्वान अधिवक्ता और विचारक के रूप में इसे संवैधानिक वादे की पूर्ति माना। उनका तर्क था कि शिक्षा अब राज्य की दया पर आधारित कोई कल्याणकारी योजना नहीं, बल्कि नागरिक का एक न्यायसंगत मौलिक अधिकार है। इसने निजी संस्थानों की सामाजिक जवाबदेही को कानूनी रूप से अनिवार्य बनाया, जिससे समाज के कमजोर वर्गों के बच्चों को भी कुलीन स्कूलों में प्रवेश मिला। RTE अधिनियम ने शिक्षक–छात्र अनुपात और स्कूल के मानकों के लिए कानूनी जवाबदेही तय की। इसने शारीरिक दंड और प्रवेश परीक्षाओं पर प्रतिबंध लगाकर स्कूल को एक सुरक्षित और भयमुक्त वातावरण बनाया। सिब्बल के अनुसार, यह अधिनियम भारत की डेमोग्राजिकल डिविडेंड को भुनाने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम था। इसने पहली बार राज्य को कानूनी रूप से बाध्य किया कि वह 6 से 14 वर्ष के हर

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

बच्चे की मुफ्त शिक्षा सुनिश्चित करे। इसने शिक्षा के प्रबंधन में अभिभावकों की भूमिका को स्कूल प्रबंधन समितियों के माध्यम से कानूनी दर्जा दिया। डॉ. सिब्बल का मानना था कि कानून के बिना अधिकार केवल कागजी होते हैं, और RTE ने इस अधिकार को प्रवर्तनीय बनाया। इस अधिनियम ने फेल न करने की नीति (No-detention Policy) शुरू की ताकि बच्चों का बचपन परीक्षा के बोझ तले न दबे। इसने स्कूलों की मैपिंग और उन बच्चों की पहचान पर जोर दिया जो कभी स्कूल नहीं गए थे। RTE ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था में समावेशिता और सामाजिक न्याय को एक वैधानिक गारंटी के रूप में स्थापित किया। सिब्बल के अनुसार, – बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009, भारतीय शिक्षा की यात्रा में एक ऐतिहासिक मील का पत्थर है।[8]

9. शिक्षण शास्त्र और रटने की मुक्ति, NCF 2005: राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (NCF 2005) के मुख्य वास्तुकार प्रो. यशपाल ने शिक्षा बिना बोझ के का दर्शन दिया। उन्होंने तर्क दिया कि ज्ञान सूचनाओं का संग्रह नहीं है। उनके अनुसार, वर्तमान शिक्षा व्यवस्था ने बच्चों को रटने की मशीन बना दिया है। NCF ने सिफारिश की कि शिक्षा को बच्चे के वास्तविक जीवन और परिवेश से जोड़ना चाहिए ताकि वह स्वयं ज्ञान का सृजन कर सके। इसने शिक्षक को एक श्तानाशाहश से बदलकर एक सहजकर्ता की भूमिका में खड़ा किया। प्रो. यशपाल का मानना था कि पाठ्यपुस्तकों का भारी वजन और परीक्षा का डर बच्चों की रचनात्मकता को मार देता है। उन्होंने पाठ्यक्रम में लचीलापन और स्थानीय ज्ञान को शामिल करने की वकालत की। इसने रचनात्मकता पर जोर दिया, जहाँ बच्चा अपने अनुभवों के आधार पर समझ विकसित करता है। NCF ने शांति, कला और शारीरिक शिक्षा को मुख्य विषयों के बराबर स्थान दिया। इसने मूल्यांकन को निरंतर और व्यापक बनाने का सुझाव दिया ताकि साल के अंत में होने वाली परीक्षा का मानसिक तनाव कम हो सके। प्रो. यशपाल ने स्कूल की चारदीवारी से बाहर के जीवन से जुड़ने का आह्वान किया, जिससे शिक्षा अधिक सार्थक और प्रासंगिक बनी। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि ज्ञान का निर्माण बच्चे के स्वयं के सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों से होना चाहिए। NCF 2005 ने रटने की प्रवृत्ति को समाप्त कर सक्रिय सीखने (Active Learning) की दिशा में भारतीय शिक्षाशास्त्र को एक नई दिशा प्रदान की। इसने पाठ्यक्रम को लचीला बनाया ताकि वह विविध पृष्ठभूमियों के बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। यशपाल के अनुसार, – बच्चे ज्ञान के निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं हैं; वे अपने अनुभवों और परिवेश के साथ अंतःक्रिया करके सक्रिय रूप से अपने ज्ञान का निर्माण करते हैं।[9]

10. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020, भविष्योन्मुखी शिक्षा– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मसौदा प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में तैयार किया गया। उन्होंने भारतीय शिक्षा को लचीला, बहु–विषयक और वैश्विक बनाने पर जोर दिया। उनका मानना है कि भविष्य की समस्याओं के समाधान के लिए छात्रों को विषयों की पुरानी सीमाओं से ऊपर उठकर सोचना होगा। NEP 2020 ने 10+2 ढांचे को बदलकर 5+3+3+4 संरचना पेश की, जिसमें पूर्व–प्राथमिक शिक्षा को भी शामिल किया गया है। यह नीति कक्षा 6 से ही कोडिंग और व्यावसायिक कौशल पर जोर देती है। यह मातृभाषा में शिक्षण को प्राथमिकता देकर सीखने की प्रक्रिया को स्वाभाविक बनाती है। डॉ. कस्तूरीरंगन के अनुसार, नई नीति का लक्ष्य केवल साक्षरता नहीं, बल्कि क्रिटिकल थिंकिंग और नैतिक मूल्यों से युक्त नागरिकों का निर्माण करना है। यह उच्च शिक्षा में मल्टीपल एंट्री और एग्जित का विकल्प देकर छात्रों को अपनी रुचि के अनुसार करियर चुनने की आजादी देती है। यह भारत को पुनः विश्व गुरु बनाने की दिशा में एक एकीकृत प्रयास है। डॉ. कस्तूरीरंगन

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED, INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 04, April 2026

ने अनुसंधान के लिए एक नेशनल रिसर्च फाउंडेशन की वकालत की ताकि भारत वैश्विक नवाचार में अग्रणी बन सके। इस नीति ने डिजिटल शिक्षा और तकनीक के विवेकपूर्ण उपयोग को भी प्राथमिकता दी है। इसका उद्देश्य एक ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करना है जो न केवल स्थानीय हो, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी प्रतिस्पर्धी हो। कस्तूरीरंगन का विजन भारतीय युवाओं को ग्लोबल सिटिजन बनाने के साथ–साथ उनके भीतर भारतीय गौरव की भावना जगाना भी है। कस्तूरीरंगन के अनुसार , – शिक्षा का उद्देश्य केवल साक्षरता या रोजगार नहीं होना चाहिए, बल्कि यह आलोचनात्मक सोच, तर्कसंगत निर्णय और नैतिक मूल्यों के साथ एक पूर्ण मानव का विकास है।[10]

निष्कर्ष– 1947 से 2020 तक की यह यात्रा साक्षरता के संघर्ष से लेकर नवाचार के युग तक का सफर है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था ने पहुँच (Access) और नामांकन के लक्ष्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त किया है, और अब पूरा ध्यान गुणवत्ता, समानता और वैश्विक प्रतिस्पर्धा पर केंद्रित है। राधाकृष्णन आयोग के दार्शनिक आधार से लेकर कस्तूरीरंगन की भविष्योन्मुखी दृष्टि तक, भारत ने निरंतर अपनी शिक्षा प्रणाली को आधुनिक बनाया है। NEP 2020 इस लंबे ऐतिहासिक विकास का चरमोत्कर्ष है, जो भारतीय युवाओं को 21वीं सदी की वैश्विक चुनौतियों के लिए तैयार करते हुए उनकी जड़ों से जोड़े रखने का वादा करता है। भविष्य की सफलता अब केवल कागजी नीति पर नहीं, बल्कि इसके धरातल पर प्रभावी क्रियान्वयन, संसाधनों के उचित आवंटन और शिक्षकों के निरंतर सशक्तिकरण पर निर्भर है। यह ऐतिहासिक विश्लेषण पुष्टि करता है कि शिक्षा ही किसी राष्ट्र के कायाकल्प का एकमात्र और सबसे सशक्त माध्यम है। अब हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि ज्ञान का यह प्रकाश समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे, जिससे भारत एक न्यायपूर्ण और समृद्ध राष्ट्र के रूप में विश्व पटल पर अपनी जगह बना सके।

संदर्भ सूची–

1. Radhakrishnan, Sarvepalli. Report of the University Education Commission. Vol. 1, Manager of Publications, 1949, p. 24.
2. Mudaliar, A. Lakshmanaswami. Report of the Secondary Education Commission. Ministry of Education, 1953, p. 114.
3. Kothari, Daulat Singh. Education and National Development: Report of the Education Commission, 1964-66. NCERT, 1966, p. 1.
4. Rao, V.K.R.V. Education and Human Resource Development. Allied Publishers, 1966, p. 42.
5. Naik, J.P. The Education Commission and After. Allied Publishers, 1982, p. 18.
6. Miri, Mrinal. Identity and the Moral Life. Oxford University Press, 2003, p. 54.
7. Sen, Amartya. Development as Freedom. Oxford University Press, 1999, p. 74.
8. Sibal, Kapil. The Right to Education: A Perspective. Ministry of Information and Broadcasting, 2010, p. 2.
9. Yashpal. National Curriculum Framework 2005. NCERT, 2005, p. 25.
10. Kasturirangan, Krishnaswamy. Draft National Education Policy 2019. MHRD, 2019, p. 14.